साहित्य और नैतिक मूल्य

*राकेश कालोत

'नैतिक' शब्द का अर्थ है- 'नीति सम्मत।' 'नीति' शब्द का संबंध संस्कृत की 'णीय' धातु से है जिसका अर्थ है- 'ले जाना' या 'पथ प्रदर्शन करना। इस प्रकार नीति वह है जो ' ले जाए' या 'आगे ले जाए।" मूल्य का अर्थ है- निकष, प्रतिमान या कसौटी। मनुष्य के प्रत्येक विचार और कर्म में मूल्य का प्रश्न बहुत महत्त्वपूर्ण होता है। उसमें अनेक प्रकार के गुण- अवगुण और विभिन्न प्रकार की प्रवृत्तियां होती हैं जिनके अनुरूप वह कुछ मूल्य निर्मित करता है लेकिन उसके उन मूल्यों को ही प्रधानता दी जाती है जो समाज के विरोधी न हों बल्कि उस के पोषक हों क्योंकि व्यक्ति की पूर्णता का स्रोत और केंद्र समाज ही होता है।

मानव चिरंतन काल से ही पाशविक वृत्तियों का परित्याग कर उनसे ऊपर उठकर शिव और सौंदर्य का संधान करता आया है। मानव कर्म में करणीय-अकरणीय का पार्थक्य स्थापित करने के लिए, अच्छाई या शिवत्व को स्थापित करने के लिए जिन मूल्यों की रचना की जाती है वे नैतिक मूल्य की संज्ञा से अभिहित होते हैं। हिन्दी साहित्य कोश के अनुसार 'समाज को स्वस्थ एवं संतुलित पथ पर अग्रसर करने एवं व्यक्ति को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को उचित रीति से प्राप्त करने के लिए जिन विधि निषेध मूलक सामाजिक, व्यावहारिक, आचरिक, धार्मिक तथा राजनीतिक आदि नियमों का विधान देश काल और पात्र के संबंध में किया जाता है उसे नीति शब्द से अभिहित करते हैं।" इस अर्थ में व्यक्ति और समाज के कल्याण को दृष्टि में रखकर ही नैतिक मूल्य निर्धारित किए जाते हैं। मूलत: व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन की आवश्यकताएं इनकी निर्मिति का आधार होती हैं। यही कारण है नैतिक मूल्य देशकाल सापेक्ष होते हैं। किसी भी समाज या देश की स्थिति और मनोदशा परिवर्तनशील होती है। सभ्यता के विकास के साथ साथ मनुष्य या किसी भी जाति की उन्नति उसके विचारों में परिवर्तन उपस्थित करती है जिससे नैतिक मूल्यों की आधारभूत संरचना में बदलाव आता है। इस प्रकार नैतिक मूल्य शाश्वत नहीं होते।

नैतिक मूल्यों से युक्त होकर मनुष्य संस्कृत होता है। ऐसा व्यक्ति ही समाज में प्रशंसा का पात्र होता है। नैतिक मूल्य किसी भी व्यक्ति के गुण- दोष पहचानने का आधार बनते हैं। किसी के चरित्र का आकलन भी नैतिक मूल्य होते हैं। यदि नैतिकता किसी व्यक्ति को संस्कृत करती है, मानवीय बनाती है तो साहित्य भी पीछे नहीं। वस्तुतः दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। दोनों का कर्मक्षेत्र समान है। दोनों का लक्ष्य एक है- मानव को मानव बनाए रखना। उसकी क्षुद्रताओं का परिष्कार कर समाज का उन्नयन करना। नैतिक मूल्य वाचिक परंपरा का लंबे समय तक निर्वहन न कर पाने की स्थिति में लिखित परंपरा में अभिव्यक्त हुए और साहित्य उनका सशक्त माध्यम बना।

साहित्य शब्द का व्युत्पत्ति परक अर्थ भी इसकी पुष्टि करता है। संस्कृत के 'सहित' शब्द से साहित्य शब्द की व्युत्पत्ति की जाती है। 'सहित' शब्द दो अर्थों में प्रयुक्त होता है- 'सहितस्य भाव सहित' अर्थात 'साथ' का भाव ही साहित्य है। इस अर्थ में साहित्य का अर्थ होता है 'समुदाय'। सहित' का एक दूसरा अर्थ भी है- 'हितेन सहितं' अर्थात 'हित के साथ। हित के साथ होने का भाव ही साहित्य है। इस प्रकार साहित्य लोकहित से जुड़ता है। लोक कल्याण की इस भावना को साहित्य से पृथक नहीं किया जा सकता। 'यह सहित शब्द इतना अर्थगर्भ है कि आधुनिक युग में इसका विस्तार एक अन्य आयाम में भी किया गया है। मनुष्य सामाजिक प्राणी है तो इसलिए कि वह अपने अलावा दूसरों के करने धरने में रस लेता है, औरों के दुख सुख में शामिल होता है तथा औरों को भी अपने दुख का साझीदार बनाना चाहता है। यहीं नहीं बल्कि वह अपने इर्द-गिर्द की दुनिया को समझना चाहता है और इस दुनिया में कोई कमी दिखाई पड़ती है तो उसे बदल कर बेहतर बनाने की भी कोशिश करता है। परस्परता के इस वातावरण में ही प्रसंगवश वह चीज पैदा होती है जिसे साहित्य की संज्ञा दी जाती है। दूसरी और जब मनुष्य की कोई वाणी समाज में परस्परता के इस भाव को मजबूत बनाती है तो उसे साहित्य कहा जाता है। इस प्रकार साहित्य में निहित सहित शब्द का यह एक व्यापक सामाजिक अर्थ है।

मानव चिरंतन काल से ही पाशविक वृत्तियों का परित्याग कर उनसे ऊपर उठकर शिव और सौंदर्य का संधान करता आया है। साहित्यकार की कलम मनुष्य को स्वार्थ से ऊपर उठा कर परमार्थ की दिशा में बढ़ने के लिए प्रेरित करती है। संसार में व्याप्त अन्याय पशुता क्रूरता और अमानवीयता को देख या किसी जीव को कष्ट या पीड़ा में पड़ा हुआ देख एक साहित्यकार संवेदना से शून्य नहीं हो पाता, उसकी संवेदना जागृत हो उठती है। उसकी वाणी उस कुरूपता को दूर करने का यत्न करती है। उसकी इस अभिव्यक्ति में ही साहित्यिक सौंदर्य का जन्म होता है। आदि कवि वाल्मीकि भी व्याध द्वारा क्रौंच

पक्षी के वधोपरांत क्रंदन करते हुए दूसरे पक्षी के दुख से कातर करुणा संवलित हो मानवीय संवेदना से संयुक्त हो उठते हैं और व्याध को श्रापित करते हैं-

"मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वती क्षमा। "

हे निषाद तुझे कभी भी शांति न मिले क्योंकि तूने इस क्रौंच के जोड़े में से एक जो काम से मोहित हो रहा था बिना अपराध के ही हत्या कर डालीं। अनैतिक कर्म करने वाले निषाद को आप ग्रस्त कर दंडित करना वाल्मीकि को धर्म जान पड़ता है। नीति सौन्दर्य का ही आंतरिक रूप है। वस्तुतः बाल्मीकि के मुख से अनायास निकला वह श्राप ही श्लोक के रूप में प्रथम काव्यमयी अभिव्यक्ति है। साहित्य का प्रथम सौंदर्यात्मक स्फोट है।

***शोधार्थी**
दिल्ली विश्वविद्यालय